



प्रातिपदिक का शास्त्रीय स्वरूप

डॉ संजीवनी आर्या
सहायक आचार्या, संस्कृत विभाग,
विद्या भवन महिला महाविद्यालय, सिवान बिहार

अभिसंक्षिप्तिका

सारांश:-

शब्दों से यह संपूर्ण जगत भासमान होता है। शब्द के बिना संसार अंधकारमय है। इस प्रकाशमान शब्द का निरूपण शास्त्रों में विविध प्रकार से हुआ है। निरुक्तादि ग्रंथों में शब्द के चार प्रकार नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात का निरूपण किया गया है। कुछ शास्त्रों में दो प्रकार नाम एवं आख्यात शब्दों में ही सबका अंतर्भाव कर लिया गया है। वहां नाम में ही उपसर्ग एवं निपात स्वीकृत कर लिए जाते हैं। नाम क्या है, उसका स्वरूप क्या है, शास्त्रों में उसकी क्या विवेचना है, कितने उसके भेद हैं, किस प्रकार वह पद रूप में प्रयुक्त होता है इत्यादि प्रश्नों के समाधान रूप को यहां विचार किया जा रहा है

कूटशब्दः

नाम, प्रातिपदिक, शब्द, रूढ़, योगरूढ़, विभक्ति, जातिशब्द, क्रियाशब्द, गुणशब्द, यदृच्छाशब्द

.....

प्रस्तावना-

अभ्यासार्थक म्ना धातु से “म्नायतेऽभ्यस्यते इति नाम” इस व्युत्पत्ति के अनुसार ‘नामन्सामन्व्योमन्रोमन्लोमन्पाप्मन्ध्यामन्’¹ सूत्र में मनिन् प्रत्यय करके म लोप तथा नाभाव

¹उणादिकोष

होकर नाम शब्द सिद्ध होता है। प्रातिपदिक का ही पर्याय नाम है। जब “नमति आख्यातार्थं प्रति विशेषणी भवतीति” व्युत्पत्ति करते हैं तब नाम शब्द से सुबन्त पद का ग्रहण होता। जैसे- “चत्वारि शृंगाः” इस व्याकरण के प्रयोजन में भाष्य में नागेश भट्ट ने निर्देश किया है- “नामशब्देन सुबन्तं नमति आख्यातार्थं प्रति विशेषणी भवतीति व्युत्पत्तेः”²। वस्तुतः प्रातिशाख्य निरुक्तादि ग्रन्थों के पर्यालोचन से नाम पद प्रातिपदिक बोधक ही है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य में कहा है-

“तन्नाम येनाभिदधाति सत्त्वम्। तदाख्यातं येन भावं स धातुः। उपसर्गा विंशतिरर्थवाचकाः सहेतराभ्यामितरे निपाताः”³। चतुर्विध पदों में नाम शब्द से ही उपसर्ग और निपात का ग्रहण होना चाहिए। क्योंकि उपसर्ग और निपात भी अन्ततः सुबन्त ही है किन्तु प्रातिशाख्यों में निरुक्तादि ग्रन्थों में उपसर्ग एवं निपात का नाम से पृथक् ही ग्रहण किया है।

जैसे- शुक्लयजुर्वेदीय प्रातिशाख्य में उक्त है-

क्रियावाचकमाख्यातमुपसर्गो विशेषकृत्।

सत्त्वाभिधायकं नाम निपातः पादपूरणः⁴।

निरुक्त में “सत्त्वप्रधानानि नामानि”⁵ नाम का लक्षण किया है। अर्थात् सत्त्वाभिधायक नाम है।

“लिंगसंख्यानितं द्रव्यं सत्त्वमित्यभिधीयते”⁶।

तदभिन्नमद्रव्यम्। जैसे- राम, कृष्णादि सत्त्वाभिधायक नाम पद से ग्रहण किये जाते हैं तथा लिंग, संख्या से भिन्न च, ह, वा इत्यादि चादि निपात पद से व्यवहृत होते हैं। यथा- पाणिनि का सूत्र- “चादयोऽसत्त्वे”⁷ इति। सारस्वत व्याकरण में “अविभक्तिकं नाम”⁸ सूत्र प्राप्त होता है। इसका आशय है कि विभक्ति रहित धातु वर्जित अर्थवान् शब्द नाम है। इसी प्रकार महर्षि पाणिनि प्रणीत अष्टाध्यायी में “अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपादिकम्”⁹ सूत्र प्राप्त है। शब्दशक्तिप्रकाशिकाकार जगदीश भट्टाचार्य ने नाम और प्रातिपदिक का अभेद उपस्थापित करते हुए कहा-

² महाभाष्यपस्पशाह्निक उद्योत

³ ऋग्वेदप्रातिशाख्य 12/18-21

⁴ शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य 8/46

⁵ निरुक्त 1.1

⁶ निरुक्त टीका

⁷ अष्टाध्यायी 1.4.57

⁸ सारस्वत व्याकरण अजन्त पु. 6 सूत्र

⁹ अष्टाध्यायी 1.2.45

निरुक्ता प्रकृतिर्द्वेधा नामधातुप्रभेदतः।

यत् प्रातिपदिकं प्रोक्तं तन्नाम्नातिरिच्यते¹⁰॥

अर्थात् जिससे प्रत्यय का विधान किया जाता है वह प्रकृति दो प्रकार की है- प्रथम भ्वादिधातुरूप, द्वितीय युष्मदस्मदादि नामरूप। नाम पद प्रातिपदिक ही है, उससे भिन्न नहीं है। इसीलिए जगदीश भट्टाचार्य ने नाम का लक्षण किया है-

“येन स्वीययदर्थस्य मुख्यतः प्रतिपादने।

स्वोत्तरप्रथमापेक्षया तन्नाम स्यात्तदर्थकम्¹¹”॥

इस प्रकार जो प्रातिपदिक का लक्षण है, वही नाम का लक्षण होता है। नाम और प्रातिपदिक में कोई भी सिद्धान्त की दृष्टि से भेद नहीं है।

“ते विभक्त्यन्ताः पदम्” गौतम सूत्र व्याख्या में भारद्वाज ने लिखा है-

“स्वाद्यन्तं नाम तिबाद्यन्तमाख्यातमिति नामाख्यातयोः सामान्यतो लक्षणमुक्त्वा अभिधेयस्य क्रियान्तरयोगाद् विशिष्यमाणरूपशब्दो नाम। यथा ब्राह्मण इति क्रियाकारकसमुदायः, कारकसंज्ञाविशिष्ट इत्युक्तम्¹²”। किञ्च समासशक्तिनिर्णय में भट्टोजिदीक्षित ने प्रतिपादित किया है-

“सुपां सुपा तिङा नाम्ना धातुनाऽथ तिङां तिङा।

सुबन्तेनेति विज्ञेयः समासः षड्विधो बुधैः¹³”॥

इस कारिका के माध्यम से सुप् का नाम के साथ समास होता है। यदि नाम पद सुबन्त होता तो सुप् का सुप् के साथ प्रथम समास में ही अन्तर्भाव हो जाता। सुप् का सुप् के साथ समास होता है, इसका उदाहरण राजपुरुषः। सुप् का नाम के साथ समास होता है, इसका उदाहरण है कुम्भकारः। दोनों का उदाहरण पृथक्-पृथक् है। इससे भी ज्ञात होता है कि नाम और प्रातिपदिक दोनों पर्याय ही हैं।

नाम-भेद:-

नाम अथवा प्रातिपदिक दो प्रकार के होते हैं- 1. रूढ़ 2. यौगिक। महर्षि यास्क से भी प्राचीन आचार्य शाकटायन सभी नामों को धातुज स्वीकार करते हैं। निरुक्त शास्त्र का सिद्धान्त भी धातुज ही स्वीकार

¹⁰शब्दशक्तिप्रकाशिका नाम निरूपण

¹¹शब्दशक्तिप्रकाशिका नाम निरूपण

¹²न्यायवार्तिक 2/2/60

¹³वैयाकरणभूषणसार समासशक्तिनिर्णय

करता है किन्तु आचार्य गार्ग्य सभी नामों को धातुज नहीं स्वीकार करते हैं। उनके मत में रूढ़ शब्द तत्तद् अर्थों में प्रकृति-प्रत्यय के विभाग से रहित अव्युत्पन्न भी नाम शब्द हैं। जैसे- मणि, नूपुर, डित्थ, कपित्थ इत्यादि। इन शब्दों में प्रकृति-प्रत्यय का विभाग पाचक पाठकादि के समान दृष्टिगोचर नहीं होता है। इसीलिए मणि, नूपुर इत्यादि रूढ़ि शब्द भी स्वतन्त्र रूप से विधान किये जाते हैं। कुछ वैयाकरण भी गार्ग्य के उपर्युक्त सिद्धान्त का अनुसरण करते हैं। “**नामान्याख्यातजानि इति शाकटायनो नैरुक्तसमयश्च न सर्वाणीति गार्ग्यो वैयाकरणानां चैके**¹⁴”।

यहाँ पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष का विवेचन होने पर “सत्य” शब्द में क्या प्रकृति है और कौन सा प्रत्यय है? यह प्रश्न उपस्थित होता है। यद्यपि शाकटायन आचार्य ने “अस्” और “इष्ट” इन धातुओं से सत्य शब्द का व्युत्पादन किया है लेकिन लोक में कहीं भी इन दो धातुओं से सम्बन्धित प्रकृतिभूत यौगिक शब्द दृष्टिगोचर नहीं होता है। इसीलिए आचार्य शाकटायन का मत व्यापक प्रतीत नहीं होता है। अतः एव महर्षि पाणिनि ने भी प्रातिपदिक संज्ञा विधायक “**अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्**¹⁵” सूत्र की रचना की। जिससे रूढ़ि शब्दों का भी प्रातिपदिकत्व सिद्ध हो सके। यदि सभी नाम धातुज ही होते तो “**कृत्तद्धितसमासाश्च**¹⁶” इस एक ही सूत्र से सभी धातुज नामों की प्रातिपदिक संज्ञा सिद्ध हो जाती, पूर्व सूत्र की आवश्यकता नहीं थी लेकिन महर्षि पाणिनि ने भी प्रातिपदिक संज्ञा के विधानार्थ सूत्रद्वय की रचना की है। अतः रूढ़ और यौगिक दो प्रकार के नाम स्वीकार किये गये हैं। नाम का द्वैविध्य कात्यायन और पतंजलि ने भी स्वीकार किया है-

“**प्रातिपदिकविज्ञानाच्च पाणिनेः सिद्धम्। उणादयोऽव्युत्पन्नानि प्रातिपदिकानि**¹⁷”। इस वार्तिक परिभाषा के द्वारा अर्थात् “**आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम्**¹⁸” सूत्र की “षण्ढः”, इत्यादि उणादि शब्दों में प्रवृत्ति न हो इसके लिए उणादि शब्दों का प्रतिषेध किया है। आचार्य पाणिनि के मत में इस प्रकार के प्रातिपदिक अव्युत्पन्न स्वीकृत हैं। ऐसा सिद्धान्त के रूप प्रतिपादन किया है। इस प्रकार महर्षि पाणिनि, कात्यायन, पतंजलि का सिद्धान्त भी आचार्य गार्ग्य के सिद्धान्त को पुष्ट करता है। नाम का द्वैविध्य प्रसिद्ध है किन्तु अवान्तर भेद से ये चार प्रकार के होते हैं-

1. रूढ़ 2. यौगिक 3. योगरूढ़ 4. यौगिक रूढ़

रूढ़ नाम-

¹⁴निरुक्त 1.4.1

¹⁵अष्टाध्यायी 1.2.45

¹⁶अष्टाध्यायी 1.2.46

¹⁷पातञ्जलमहाभाष्ये 7.1.2

¹⁸अष्टाध्यायी 7.1.2

जहाँ अवयव शक्ति के बिना केवल समुदाय की शक्ति से अर्थ का बोध होता है, वह नाम रूढ़ कहलाता है। जैसे- मणि, नूपुर, गोमण्डलादि। इनमें प्रकृति-प्रत्यय के विभाग की कल्पना नहीं की जा सकती है और ये शब्द अखण्ड रूप से रत्नभूषणादि अर्थों में व्यवहृत होते हैं। इसीलिए संज्ञा पद से भी नाम पद का व्यवहार होता है। संज्ञा तीन प्रकार की होती है-

1. नैमित्तिकी 2. पारिभाषिकी 3. औपाधिकी। जैसा कि कहा है-

“रूढं संकेतवन्नाम सैव संज्ञेति कीर्त्यते।

नैमित्तिकी पारिभाषिक्यौपाधिक्यपि तद्विदा¹⁹॥”

नैमित्तिकी संज्ञा-

नैयायिक जाति विशिष्ट व्यक्ति में संकेतग्रह मानते हैं। इसीलिए जाति विशिष्ट संकेतवती संज्ञा नैमित्तिकी संज्ञा होती है तथा नैमित्तिकी संज्ञा के द्वारा ही गोत्व-जाति-विशिष्ट गौ का अभिधान होता है। मीमांसक केवल जाति में ही संकेतग्रह स्वीकार करते हैं। अतः एव उनके मत में व्यक्ति का ज्ञान अत्यन्त दुष्कर होता है। जैसा कि जगदीशभट्ट ने शब्दशक्तिप्रकाशिका में प्रतिपादित किया है-

“जात्यवच्छिन्नसंकेतवती नैमित्तिकी मता।

जातिमात्रे हि संकेताद् व्यक्तेर्भानं सुदुष्करम्²⁰॥”

पारिभाषिकी-आधुनिक संकेतवती संज्ञा पारिभाषिकी संज्ञा कहलाती है। जैसे- पिता आदि के द्वारा पुत्रादि में संकेतित। यज्ञदत्त, देवदत्तादि पद पारिभाषिकी संज्ञा है। ग्रन्थकार द्वारा निर्देशित आदैच्, अदेङ् आदि की वृद्धि, गुण संज्ञा पारिभाषिकी संज्ञा है।

औपाधिकी-

उपाधि विशिष्ट अर्थ की प्रतिपादिका संज्ञा औपाधिकी संज्ञा कहलाती है। जैसे- आकाश, पशु आदि पद औपाधिकी संज्ञा है। आकाश नाम शब्दत्व उपाधि से युक्त है “आकाश नाम शब्दत्वोपाध्यवच्छिन्नशक्तिमत्पदम्” इति। इसी प्रकार पशु नाम लोमवल्लांगूलत्व उपाधि से युक्त है “पशुपदं लोमवल्लांगूलत्वोपाध्यवच्छिन्नशक्तिमदिति”।

¹⁹शब्दशक्तिप्रकाशिका प्रकरण 17 कारिका।

²⁰शब्दशक्तिप्रकाशिका प्रकरण 19 कारिका।

इस प्रकार नाम (प्रातिपदिक) नैमित्तिकी, पारिभाषिकी तथा औपाधिकी की भेद से तीन प्रकार के हुए।

आलंकारिकों के द्वारा भी रूढ़ पद तीन प्रकार का स्वीकार किया गया है, किन्तु उनके प्रकार भिन्न हैं। जैसा कि चन्द्रालोक में प्रतिपादित किया है-

विभक्त्युत्पत्तये योग्यः शास्त्रीयः शब्द इष्यते।

रूढयौगिकतन्मिश्रैः प्रभेदैः स पुनस्त्रिधा॥

अव्यक्तयोगनियोगयोगाभासैस्त्रिधाऽऽदिमः।

ते च वृक्षादिभूवादिमण्डपाद्या यथाक्रमम्²¹॥

जयदेव कवि ने इन दो कारिकाओं के द्वारा नाम का त्रैविध्य सोदाहरण प्रस्तुत किया है। अर्थात् जिससे (शब्द से) सुप्, तिङ् विभक्तियाँ होती हैं, वही शास्त्र-सम्बन्धी शब्द पद कहलाता है और वह रूढ़, यौगिक, योगरूढ़ विभाग से तीन प्रकार का होता है। रूढ़ प्रातिपदिक भी अव्यक्तयोग, नियोग, योगाभास के भेद से तीन प्रकार के होते हैं। ये अन्वर्थ संज्ञक शब्द वृक्ष “वृश्चति आतपमिति वृक्षः” अथवा “वृश्च्यते छिद्यत इति वृक्षः” अव्यक्तयोग का उदाहरण है। इसी प्रकार निर्गतो योगः यस्मात् स नियोगः शब्दः। इसमें भू, वा, पठ्, चल् प्रभृतिधातुओं का समावेश होता है तथा ये सत्तादि अर्थों में रूढ़ है। तृतीय योगाभाससंज्ञकः शब्दः, यथा- मण्डपः। यहाँ मण्डं पिबति इति मण्डमः यह मण्डप शब्द योगार्थ में शब्द समुदाय शक्ति से रूढ़ है। अतः मण्डप शब्द योगाभास है। यही आलंकारिकों के मत में तीन प्रकार के रूढ़ प्रातिपदिक हैं जिसे जयदेव कवि ने उपर्युक्त कारिका के माध्यम से दर्शाया है।

शाब्दिकों ने रूढ़ प्रातिपदिक को चार प्रकार से विभाजित किया है। महाभाष्यकार पतंजलि ने कहा-

“चतुष्टयी शब्दानां प्रवृत्तिः- जातिशब्दाः, गुणशब्दाः, क्रियाशब्दाः, यदृच्छाशब्दाश्चतुर्थाः²²”।

जातिशब्द - यथा-गो शब्द में गोत्वजाति रहती है और वही सामान्य रूप से सकल गौ की बोधिका होती है, जैसा कि महाभाष्य में महर्षि पतंजलि ने कहा है- “येनोच्चारितेन

²¹चन्द्रालोक प्रथममयूख 10 कारिका।

²²महाभाष्य प्रत्याहाराहिनिक ऋलृक् सूत्र।

सास्नालांगूलककुदखुरविषाणिनां सम्प्रत्ययो भवति²³” इसी प्रकार घटादि में घटत्वादि जाति रहती है और वही सभी घट, पट आदि की नियामिका होती है।

गुणशब्द - गुण शब्द शुक्ल, नील, पीत प्रभृति होते हैं और वे द्रव्याश्रित गुणों के ही बोधक होते हैं जैसे- “शुक्लो गौः”। गो शब्द में अभिव्यज्यमान शुक्ल आदि का अभिव्यंजक गुण शब्द ही है।

क्रियाशब्द- गौ आदि में जो चलन, भक्षणादि क्रियायें प्रतीत होती हैं, वही क्रिया शब्द है। महाभाष्य में महर्षि पतंजलि कहते हैं-

“तदिगितं चेष्टितं निमिषितं, स क्रियाशब्दः²⁴।

इस प्रकार जाति, गुण शब्द से पृथक् ही क्रियाशब्द की सत्ता स्वीकार की जाती है।

यदृच्छाशब्द-

पिता आदि के द्वारा ग्रन्थकार के द्वारा पुत्र का अथवा ग्रन्थ का स्वेच्छा से व्यवहारार्थ जो संकेत किया जाता है, वह यदृच्छा शब्द है। जैसे- पिता ने अपने पुत्र का नाम लृतक रखा। ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ का नाम पदशाँ रखा। उन-उन अर्थों में वे शब्द रूढ़ हैं। इस प्रकार पूर्वोक्त गुण, क्रिया आदि शब्दों में यदृच्छा शब्द का अन्तर्भाव नहीं होता है। अतः शब्दों के प्रकारों में चतुर्थ यदृच्छा शब्द को जानना चाहिए। वार्तिककार कात्यायन वर्णसमाम्नाय में लृकारोपदेश का प्रयोजन बताते हैं-

“लृकारोपदेशः यदृच्छा अशक्तिजानुकरणप्लुताद्यर्थः²⁵” इति। महाभाष्यकार व्याख्यायित करते हैं-

“यदृच्छाशब्दार्थस्तावत् यदृच्छया कश्चित् लृतको नाम तस्मिन् च कार्याणि यथा स्युः दध्यलृतकाय देहि, मध्वलृतकाय देहि, उदङ्लृतकोऽगमत् प्रत्यङ्लृतकोऽगमत्²⁶”। पुनः वार्तिककार ने “न्याय्यभावात् कल्पनं संज्ञादिषु²⁷” वार्तिक के माध्यम से यदृच्छा शब्द को खण्डित कर दिया है। क्योंकि दध्यलृतकाय यहाँ ऋतक शब्द ही उचित है, न कि लृतक शब्द। अतः त्रयी च शब्दानां प्रवृत्तिः जातिशब्दाः, गुणशब्दाः, क्रियाशब्दाः, न सन्ति यदृच्छाशब्दाः ऐसा वार्तिककार का मत है। परन्तु पातंजल महाभाष्य में चतुष्टयी शब्दानां प्रवृत्तिः ऐसा कहकर यदृच्छाशब्द को चतुर्थ प्रकार का शब्द माना है।

²³महाभाष्य पस्पशाह्निक।

²⁴तत्रैव

²⁵महाभाष्य प्रत्याहाराह्निक, ऋलृक् सूत्र।

²⁶तत्रैव

²⁷तत्रैव

यौगिक नाम- जहाँ अवयवार्थ का बोध होता है, वह यौगिक नाम कहलाता है। यथा- पाचकः, पक्ता, वाचकः, वक्ता इत्यादि। यहाँ प्रकृति और प्रत्यय का स्पष्ट रूप से भान होता है। यथा- पाचकः यहाँ पच् प्रकृति तथा ण्वल् प्रत्यय है। इसी प्रकार पक्ता में पच् प्रकृति तथा तृच् प्रत्यय स्पष्ट रूप से भासित हो रहे हैं। इन नाम पदों में प्रकृत्यर्थ और प्रत्ययार्थ का पृथक्-पृथक् निर्धारण किया है, क्योंकि धातुओं की शक्ति फल और व्यापार में प्रसिद्ध है तथा प्रत्ययों की शक्ति क्वचित् कर्ता में क्वचित् कर्म और भाव में “कर्तरि कृत्²⁸” “तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः²⁹” इत्यादि सूत्रों के द्वारा निर्धारित की गई है। अतः जहाँ अवयवार्थ शक्ति से बोध होता है, वह यौगिक नाम कहलाता है।

भेद- रूढ़ शब्दों की तरह यौगिक पद भी तीन प्रकार के होते हैं- सामासिक, तद्धितान्त और कृदन्त। क्रमशः इनके उदाहरण हैं- पुरुषसिंहः, पाराशर्यः, पाठकः।

“योगलभ्यार्थमात्रस्य बोधकं नाम यौगिकम्।

समासस्तद्धितोक्तं च कृदन्तश्चेति तत् त्रिधा³⁰”॥

आलंकारिकों के द्वारा भी रूढ़ पद की तरह यौगिक पद का भी प्रकारान्तर से त्रैविध्य स्वीकार किया गया है। यथा- शुद्धयौगिक, यौगिकमूलयौगिक, सम्भिन्नयौगिक। क्रमशः इनके उदाहरण- भ्रान्तिः, स्फुरत्कान्तिः, कौन्तेय इति।

शुद्धतन्मूलसम्भिन्नप्रभेदे यौगिकस्त्रिधा।

ते च भ्रान्तिस्फुरत्कान्ति कौन्तेयादिस्वरूपिणः³¹”॥

प्रकृति और प्रत्यय के योग से जिस अर्थ की प्रतीति होती है वह शुद्धयौगिक है। जैसे- भ्रान्ति शब्द ‘भ्रम्’ धातु से “स्त्रियां क्तिन्³²” सूत्र से क्तिन् प्रत्यय करके “अनुनासिकस्य क्विङ्गलोः क्विङ्ति³³” सूत्र से दीर्घ होकर सिद्ध होता है। यहाँ भ्रम रूप अर्थ प्रत्यय के संयोग से भी प्रकृति रूप से ही प्रतीत होता है। अतः भ्रान्ति शब्द शुद्धयौगिक की श्रेणी में स्वीकार किया गया है। जहाँ दो शुद्धयौगिकों का समास के द्वारा अर्थावबोध हो वह यौगिकमूल यौगिक नाम कहलाता है। जैसे- स्फुरत्कान्ति पद में स्फुरत् शब्द शतृ प्रत्ययान्त शुद्धयौगिक तथा दूसरा कान्ति शब्द पूर्ववत् क्तिन् प्रत्ययान्त है, दोनों के समास से स्फुरत्कान्ति शब्द स्वसम्बन्धार्थ बोधक है। तृतीय नाम

²⁸अष्टाध्यायी 3.4.64

²⁹तत्रैव 3.4.70

³⁰शब्दशक्तिप्रकाशिका यौगिक भेद निरूपण 30

³¹चन्द्रालोक प्रथममयूख श्लोक सं.11

³²अष्टाध्यायी 3.3.4

³³अष्टाध्यायी 6.4.15

सम्भिन्नयौगिक में यौगिक- अयौगिक वृत्ति से भी अर्थ की प्रतीति होती है। जैसे- कौन्तेय पद योग वृत्ति से कुन्त्यपत्य युधिष्ठिरादि सभी पाण्डवों का बोधक है, किन्तु योगायोग वृत्ति से तो केवल अर्जुन का ही बोधक है। क्योंकि अर्जुन में कुन्त्यपत्य के साथ-साथ यह शब्द विशेष रूप से रूढ़ है।

योगरूढ़ नाम- जहाँ अवयव शक्ति में समुदाय शक्ति भी हो वह योगरूढ़ नाम कहलाता है। जैसे- पंकज, पीताम्बर, दामोदर आदि। पंकात् जातः पंकजः इस विग्रह से सामान्यतः पंक में आविर्भूत सभी जल शैवाल, कमल आदि का बोध होता है, किन्तु समुदाय शक्ति से तो पंकज शब्द कमल में ही रूढ़ है। इसी प्रकार पीतम् अम्बरं यस्य, दामा उदरे यस्या। यहाँ भी बहुव्रीहि समास करने पर सामान्यतः सभी तत्तद् अवयवार्थ विशिष्ट प्राणियों का बोध होता है, किन्तु भगवान् विष्णु में ही ये दोनों रूढ़ हैं।

भेद- यौगिक पद के समान सामान्यतः योगरूढ़ भी तीन प्रकार हैं- सामासिक, तद्धितान्त, कृदन्त। जैसे- सामासिक योगरूढ़ पद का उदाहरण कृष्णसर्पः, तद्धितान्त का उदाहरण दाशरथिः, वासुदेवः, कृदन्त का उदाहरण पंकज पद है। यद्यपि पंकज शब्द सामासिक ही है। अत एव योगरूढ़ पद का द्वैविध्य ही उचित है। इसीलिए शब्दशक्तिप्रकाशिका में कहा-

सामासिकं तद्धितान्तमिति तद् द्विविधं भवेत्।

योगरूढ़ं कृदन्तस्य समासस्त्वव्यवस्थितेः³⁴॥

तथापि कृदन्त प्रत्यय का प्राधान्य दर्शाने के लिए त्रैविध्य स्वीकार किया गया है। अत एव आलंकारिकों ने सामान्यार्थ में विशेषार्थ बोधक विशेषार्थ में सामान्यार्थ बोधक, सामान्य-विशेष उभय विधार्थ बोधक नाम से योगरूढ़ पद का त्रैविध्य स्वीकार किया है। यथाक्रम उदाहरण है- नीरधिः, क्षीरनीरधिः, आकाशपंकजः। चन्द्रालोक में प्रतिपादित है-

“तन्मिश्रोऽन्योन्यसामान्यविशेषपरिवर्तनात्।

नीरधिः पंकजं सौधं सागरो भूरुहः शशी॥

क्षीरनीरधिराकाशपंकजं तेन सिद्ध्यति³⁵”।

नीराणि दधाति नीरधिः, पंकात् जातम् इति पंकजम् इस व्युत्पत्ति से जलाशय, शैवालादि सामान्यार्थ को छोड़कर क्रम से समुद्र, कमलादि रूप विशेष अर्थ के बोधक हैं। विशेषार्थ में सामान्यार्थ का बोधक क्षीरनीरधि पद है। यहाँ योगरूढ़ नीरधि पद विशेषतः समुद्रार्थक होने से क्षीर पद निरर्थक हो जाता है। अतः क्षीरनीरधि पद सामान्यतः क्षीर समुद्र रूप अर्थ का ही बोधक है। सामान्य विशेष

³⁴शब्दशक्तिप्रकाशिका योगरूढ़विभाग 29 कारिका।

³⁵चन्द्रालोक प्रथममयूख 12

उभयार्थ बोधक आकाशपंकज पद है। यहाँ सामान्य विशेष रूप से सूर्य, चन्द्र का कमलत्व एवं पंकजत्व रूप से बोध होता है।

वस्तुतः योगरूढ़ पद का समास, तद्धित, कृदन्त के भेद से त्रैविध्य मानना उचित है।

नैयायिक पुनः रूढ़, यौगिक, योगरूढ़ इनके अतिरिक्त लक्षक पद को चतुर्थ पद के रूप में स्वीकार करते हैं। गंगा पद तीरादि में शक्त्यभाव होने से गंगा पद से तीर बोधनार्थ लक्षक पद की आवश्यकता है, यह उनका मत है। वैयाकरण प्रसिद्ध, अप्रसिद्ध शक्तिद्वय भेद को स्वीकार करके अप्रसिद्ध शक्ति से तीर का बोध करते हैं। अतः वैयाकरणों के मत में लक्षक पद अतिरिक्त है ही नहीं। नैयायिकों के मत में नाम का चातुर्विध्य लक्षक पद को ग्रहण करके होता है। शाब्दिकों का नाम चातुर्विध्य यौगिकरूढ़ को ग्रहण करने पर होता है, यही विशेष है। इसका उल्लेख शब्दशक्तिप्रकाशिका में स्पष्ट है-

“रूढ़ं च लक्षकं चैव योगरूढ़ं च यौगिकम्।

तच्चतुर्धा पदैरूढ़ं यौगिकं मन्यतेऽधिकम्³⁶”॥

यहाँ पदैः इस पद से वैयाकरणों का निर्देश है।

यौगिकरूढ़ नाम-

जहाँ योगार्थ और रूढ़ार्थ दोनों पदों का स्वातन्त्र्य रूप से बोध होता है, वह वैयाकरणों के मत में यौगिकरूढ़ चतुर्थ प्रकार का नाम कहलाता है। जैसे- अश्वगन्धा, मण्डप आदि। अश्व सम्बन्ध से अश्वगन्धा शब्द वाजिशाला का बोधक है। परम यौगिक समुदाय शक्ति से औषध विशेष में रूढ़ है। अतः अश्वगन्धा पद यौगिकरूढ़ है, यह स्वीकार किया जाता है। इसी प्रकार मण्डप शब्द भी मण्डं पिबतीति इस व्युत्पत्ति से मण्डपान यौगिक है, लेकिन गृह विशेष में रूढ़ है। मण्डप शब्द के विषय में नागेश भट्ट ने कहा है-

“यत्र मण्डपादिभ्यो मण्डपानकर्त्रादेः रूढ़ार्थमण्डपादिगुणत्वेन बोधः तत्र प्रथमप्रतीतिरूढ़िविषयमुख्यार्थत्यागेन योगाद् रूढ़िपूर्वकलक्षणायाः बलवत्त्वेन लक्षणयैव बोधः³⁷।

³⁶शब्दशक्तिप्रकाशिका योगरूढ़विभाग 16 कारिका।

³⁷वैयाकरणसिद्धान्तलघुमंजूषा शक्तिनिरूपण।

इस प्रकार रूढ़, यौगिक, योगरूढ़ और यौगिकरूढ़ के भेद प्रभेद से नाम के चतुर्विध पदों का प्रतिपादन पूर्ण हुआ।

नाम विवर्त-

सत्त्वप्रधान रूप नाम नाना रूपों में विवर्तित होता है। जैसे- अजन्त नाम और हलन्त नाम के भेद से द्विविध है। अजन्त तथा हलन्त नाम पुंस्त्व, स्त्रीत्व और नपुंसकत्व के भेद से तीन प्रकार का है। यथा अग्निपुराण में वर्णन प्राप्त होता है-

द्विविधं प्रातिपदिकं ह्यजन्तश्च हलन्तकम्।

प्रत्येकं त्रिविधं तत् स्यात् पुमान्स्त्री च नपुंसकम्॥

अपि च

एतेभ्यः प्रथमादयश्च स्युः प्रातिपदिकात् पराः।

धातुप्रत्ययहीनं यत् स्यात् प्रातिपदिकन्तु तत्³⁸॥

अर्थात् इस अजन्त, हलन्त प्रातिपदिकों से प्रथमादि सप्त विभक्तियाँ होती हैं और इक्कीस प्रत्यय वचन भेद से होते हैं। ततः एक ही नाम शब्द इक्कीस रूपों में विभक्त होता है। यथा- एक ही राम शब्द इक्कीस प्रत्ययों से युक्त है।

विभक्तियाँ

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रामः	रामौ	रामाः
द्वितीया	रामम्	रामौ	रामान्
तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
पंचमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु

³⁸अग्निपुराण 351.4

इसी प्रकार सभी नाम पद सप्त विभक्तियों का आश्रयण करके नाना रूपों को प्राप्त होते हैं। नाम पदों के विवर्त में सातों विभक्तियाँ ही कारण हैं।

सप्त विभक्तियों का उल्लेख ऋग्वेद में प्राप्त होता है।

सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्त सिन्धवः।

अनुक्षरन्ति काकुदं सूर्य सुषिरामिव³⁹॥

उपर्युक्त मन्त्र को महाभाष्यकार पतंजलि ने व्याख्यात किया है- सुदेवो असि वरुण = सत्यदेवोऽसि यस्य ते सप्त सिन्धवः, सप्त विभक्तयः। अनुक्षरन्ति काकुदम्, काकुदं तालु, काकुः=जिह्वा, सास्मिन् उद्यते इति काकुदम्। सूर्य सुषिरामिव। तद्यथा शोभनामुर्मि सुषिरामग्निरन्तः प्रविश्य दहति एवं ते सप्तसिन्धवः=सप्तविभक्तयः ताल्वनुक्षरन्ति⁴⁰॥”

तथा च-

चत्वारि शृंगा त्रयो अस्य पादा।

द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य⁴¹॥

इस मन्त्र में “सप्त हस्तासो अस्य” पद से भी सप्त विभक्तियों का ही उल्लेख है। अतः सप्त विभक्तियों का निर्देश वेद प्रसिद्ध ही है। नाम पदों का सप्त विभक्तियों में विवर्त का यह भी कारण अनुमानित किया जाता है। यथा ब्रह्मा की सृष्टि ब्रह्माण्डरूपा सप्तवितस्तिकाया अर्थात् भूर्भुवादि सप्त लोकात्मिका है, उसी प्रकार शब्दब्रह्म की सृष्टि भी विस्तृत होने के कारण सप्तविभक्तिकात्मिका है। ब्रह्मा की सृष्टि सप्त वितस्तिकाया है, इस बात की पुष्टि श्रीमद्भागवतपुराण से स्पष्ट होती है-

“क्वाऽहं तमो महदहं खचराग्निर्वाभू

संवेष्टिताण्डघटसप्तवितस्तिकायः।

क्वेदृग्विधावगणिताण्डपराणुचर्या

वाताध्वरोमविवरस्य च ते महित्वम्⁴²॥”

³⁹ऋग्वेद 8.69.12

⁴⁰महाभाष्य पस्पशाह्निक

⁴¹ऋग्वेद 4.58.3

⁴²श्रीमद्भागवतपुराण 1.क.10, अ, श्लो. 11

अतः स्पष्ट है कि- यथा ब्रह्मविवर्त सप्तधा प्रकाशित होता है, तथैव तद्विन्न शब्दब्रह्म भी सप्त रूपों में विवर्तित होता है।

तथा च-

“अष्टौ यत्र प्रयुज्यन्ते नानार्थेषु विभक्तयः।

तन्नाम कवयः प्राहुर्भेदे वचनलिंगयोः॥

निर्देशः कर्म करणं प्रदानमपकर्षणम्।

स्वाम्यर्थोऽथाधिकरणं विभक्त्यर्थाः प्रकीर्तिताः⁴³॥”

उपर्युक्त श्लोक के माध्यम से आठ विभक्तियों का निर्देश प्राप्त होता है, क्योंकि सम्बोधन को भी यहाँ विभक्तियों के अन्तर्गत ही परिगणित किया गया है। अतः अष्ट विभक्तियों का सामान्यतया व्यवहार दिखाई दे रहा है। लेकिन मूलतः सप्त विभक्तियों का निर्देश है क्योंकि सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति ही होती है “सम्बोधने च⁴⁴” सूत्र से।

उपसंहार :

प्रातिपदिक (नाम) के शास्त्रीय स्वरूप को प्रतिपादित कर उसके अन्तर्गत नाम का लक्षण, नाम के रूढ़, यौगिक, योगरूढ़, यौगिक रूढ़ भेदों को निरूपित करते हुए नैमित्तिकी, पारिभाषिकी, औपाधिकी, सामासिक, तद्धितान्त, कृदन्त प्रभेदों का वर्णन किया गया है। इस प्रकार संपूर्ण परिशीलन से सुधी जन प्रातिपदिक के अथवा नाम के विस्तृत शास्त्रीय स्वरूप को अवगमन कर सकते हैं।

परिशीलित ग्रन्थ सूची

1. अग्निपुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर, विक्रम संवत्, 2010
2. अष्टाध्यायी, पाणिनि, श्रीशान्तिस्वरूप कपूर, श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रेस, बहालगढ (सोनीपत हरियाणा), 1985
3. अष्टाध्यायी सहजबोधः, पुष्पा दीक्षित, पाणिनीय शोधसंस्थान, छत्तीसगढ़, 2004
4. आचार्य यास्क का पदचतुष्टय सिद्धान्त, डॉ० ज्ञानप्रकाश शास्त्री, संस्कृत ग्रन्थागार, दिल्ली, 2002
5. उणादिकोश, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर, विक्रम संवत्, 2021

⁴³निरुक्त 1.1

⁴⁴अष्टाध्यायी 2.3.47

6. ऋग्वेद, वैदिक पुस्तकालय, अजमेर, 2016
7. ऋक्संप्रतिशाख्य, डॉ. वीरेन्द्र कुमार वर्मा, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1970
8. काशिकावृत्तिः, वामनजयादित्यप्रणीता, न्यासपदमंजरीसहिता, प्राच्यभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1965
9. गोपथ ब्राह्मण, (सं.) प्रज्ञा देवी एवं मेधा देवी हि. (अं. पं.) क्षेमकरणदास त्रिवेदी, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 2008
10. गोपथ ब्राह्मण, इण्डोलॉजिकल बुक हाउस, वाराणसी, 1972
11. चन्द्रालोक, श्री जयदेवकविप्रणीत, अनु. बटुकनाथ शर्मा, कमलमणि ग्रन्थमाला, काशी, 1927
12. निरुक्त, पंडित चन्द्रमणि विद्यालंकार, आर्ष कन्या गुरुकुल नरेला, विक्रम संवत्, 2033
13. निरुक्त दुर्गावृत्ति, सं. वी. के राजवाड़े, आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पूना, 1926
14. निरुक्त स्कन्दवृत्ति, डॉ० लक्ष्मणस्वरूप, पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर, 1924
15. निरुक्तम्, श्रीमद्यास्कमुनिप्रणीत, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 1989
16. पदपदार्थविभागपरिशीलनम्, चक्रवर्ती जगदीश चतुर्वेदी, किशोर विद्या निकेतन, वाराणसी, 1980
17. पाणिनीयव्याकरणमहाभाष्यम् (प्रथम खण्ड), (स) श्रीभार्गवशास्त्री चौखम्बा संस्कृतप्रतिष्ठान, दिल्ली, 1992
18. महाभाष्यसमीक्षणम्, डॉ. गिरीशचन्द्र त्रिपाठी, श्रीवटुकाप्रकाशनम्, हरिद्वार, 1987
19. महाभाष्यम् (नवाह्निकम्), श्रीपतञ्जलि, चौखम्बा विद्याभवन -वाराणसी, 1988
20. वैयाकरणभूषणसार, महामहोपाध्यायश्रीकौण्डभट्टविरचित, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, बनारस, 1939
21. व्याकरणमहाभाष्यम् (प्र. भाग) चौखम्बा संस्कृतप्रतिष्ठान, दिल्ली- 201
22. व्याकरणमहाभाष्यम् (द्वि. भाग) (ष. भाग) चौखम्बा संस्कृतप्रतिष्ठान, दिल 2007
23. व्याकरणमहाभाष्यम् (तृ. च. पं. भाग) चौखम्बा संस्कृतप्रतिष्ठान दिल्ली, 2008
24. व्याकरणमहाभाष्यम् (नवाह्निकम्) पतञ्जलिः (प्रदीपोद्योततत्त्वालोकव्याख्यात्रयोपेतम्) (प्र. भाग), चौखम्बा संस्कृतसंस्थान वाराणसी 2004
25. शब्दशक्तिप्रकाशिका, श्रीजगदीश तर्कालंकार भट्टाचार्य, सं. दुण्डिराज चौखम्बा संस्कृत सीरीज, आफिस, वाराणसी, 1973
26. श्रीमद्भागवतपुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर, विक्रम संवत् 2010